**ओ३म्**

**‘सबकी शारीरिक सामाजिक आत्मिक उन्नति सहित संसार**

**का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

ऋषि दयानन्द जी ने आर्यसमाज की स्थापना सर्वविद्यामय ईश्वरीय ज्ञान वेदों के प्रचार के लिए की थी। ज्ञान से बढ़कर संसार में दूसरा कोई धन या महत्वपूर्ण पदार्थ नहीं है। शरीर व आत्मा की उन्नति के लिए विद्या वा ज्ञान की आवश्यकता है। ज्ञान न हो तो मनुष्य को अपने कर्तव्यों का ज्ञान भी नहीं होता। आजकल की शिक्षा ऐसी है कि जिसमें मनुष्य को शरीर रक्षा व स्वास्थ्य विषयक ज्ञान भी नहीं होता। लोग अनाप-शनाप खाद्य पदार्थों का सेवन करते हैं और बीमार होकर अल्पकालिक मृत्यु के ग्रास बनते हैं। आज देश में अस्पतालों की संख्या में वृद्धि का कारण भी स्वास्थ्य विज्ञान विषयक ज्ञान का अभाव है। सरकार भी इस पर ध्यान नहीं देती। समाज में अनेक स्थान ऐसे हैं जहां ऐसे पदार्थ बेचे जाते हैं जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते है। आजकल के शिक्षित लोग उन पदार्थों को ऊंचे-ऊंचे दाम देकर खरीदते व खाते हैं। परिणाम यह हो रहा है कि चिकित्सा का व्यवसाय फल-फूल रहा है। ऋषि दयानन्द के समय में भोजन की समस्या आज जितनी जटिल व हानिप्रद नहीं थी परन्तु फिर भी ऋषि के क्रान्तदर्शी होने के कारण उन्होंने उस पर न केवल ध्यान ही दिया था अपितु आर्यसमाज के 6ठे नियम में उसे सम्मिलित भी किया था। आर्यसमाज के दृष्टिकोण से मनुष्य को केवल स्वास्थ्यवर्धक पदार्थों का आयु व शरीर की स्थिति के अनुरूप उचित मात्रा में निर्धारित समय पर सेवन करना चाहिये। अभक्ष्य पदार्थों यथा मांस, मदिरा, धूम्रपान, अण्डे, मछली, गुटका, तम्बाकू, तला-सड़ा-गला आदि पदार्थ वर्जित हैं। मनुष्य को इनके स्थान पर नाना प्रकार के अन्नों से बनी रोटी, दाल, शाक-सब्जी, दही, दूध, घृत, छाछ, मट्ठा, ऋतुनुकूल फल व बादाम, काजू, पिस्ता आदि शुष्क मेवों का सेवन ही करना चाहिये। यह पदार्थ न केवल बल एवं शक्तिवर्धक हैं अपितु आरोग्यकारक भी हैं। इनका सेवन करने से शरीर ऊर्जावान रहता है और आयु में वृद्धि सहित मनुष्य लम्बी आयु वाला होता है। भोजन के साथ संयम एवं निद्रा भी स्वास्थ्य के आधार है। समय पर सोना और समय पर जागना भी आवश्यक है। पूरी निद्रा नहीं लेंगे या अधिक लेंगे तो इसका भी स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। रात्रि 10 बजे शयन करना, प्रातः 4.00 बजे जाग जाना और शौच से निवृत होकर व्यायाम, आसन, प्राणायाम सहित सन्ध्या, यज्ञादि, सज्जन पुरूषों का संग व विद्वानों का सत्संग करने से मनुष्य का शरीर स्वस्थ रहता है व उसके जीवन में सुख की वृद्धि होती है। ऐसा करने से सामाजिक प्रतिष्ठा भी अर्जित होती है व मनुष्य दोषों से दूर रहता है। मनुष्य को आयुर्वेद के ग्रन्थों का अध्ययन भी करना चाहिये जिससे वह अभक्ष्य पदार्थों से बच सकें और स्वास्थ्य के अन्य सभी नियमों का पालन करते हुए अपनी आयु को सुरक्षित रखते हुए उसमें वृद्धि कर सकें। पूर्व की पंक्तियों में हमने शरीर रक्षा के कुछ मुख्य उपायों की चर्चा की है। स्वाध्याय व चिन्तन से इसमें और वृद्धि की जा सकती है।

 आर्यसमाज का 6ठा नियम सामाजिक और आत्मिक उन्नति को भी महत्व देता है। शायद ही कोई मत, मतान्तर, पंथ या सम्प्रदाय आर्यसमाज की भांति इन चीजों को महत्व देते हों जबकि जीवन में इनका महत्वपूर्ण ंस्थान है। यह भी जान लें कि धर्म सभी मनुष्यों का एक है और वह है मानवता या सत्याचार। अपने कर्तव्यों को जानना व उनका भलीभांति निर्वाह करना भी धर्म कहलाता है। कर्तव्यों का ज्ञान वेदाध्ययन वा सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों के अध्ययन से आसानी से हो जाता है। हमने बौद्ध, जैन, हिन्दू, ईसाई व मुस्लिम आदि सम्प्रदायों के लिए धर्म का प्रयोग न करके उनके लिए मत शब्द का प्रयोग किया है जो कि शब्दार्थ की दृष्टि से उचित ही है। जो सिद्धान्त ईश्वर से मिले हैं वह धर्म और जो अल्पज्ञ मनुष्यों से मिले हैं वह मत व सम्प्रदाय हैं। मनुष्यों की सामाजिक उन्नति से पूर्व हम आत्मिक उन्नति पर चर्चा करना समीचीन समझते हैं। आत्मिक उन्नति का अर्थ है कि आत्मा की उन्नति करना। शरीर के भीतर ही जीवात्मा एक सूक्ष्म, एकदेशी, चेतन, अनादि, अमर, नित्य, ससीम, अल्पज्ञानी व अल्पज्ञ तथा जन्म-मरण धर्मा पदार्थ पर सत्ता है। इसकी शक्तियों को बढ़ाना, उन्हें सत्य ज्ञान से प्रतिष्ठित करना व उसका अभ्यास करना ही आत्मा की उन्नति कहलाती है। आदि ऋषि मनु जी ने कहा है कि शरीर जल से शुद्ध होता है, मन सत्य से शुद्ध होता है, बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है और जीवात्मा तप व विद्या से शुद्ध वा उन्नत होती है। आत्मा की उन्नति के लिए शरीर, मन व बुद्धि का उन्नत होना भी आवश्यक है। वेद, योग-सांख्य दर्शन और सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों के अध्ययन से शरीर, मन, बुद्धि व आत्मा को उन्नत किया जा सकता है। आत्मा को ज्ञान की वृद्धि करनी है और उसके अनुरूप कर्म वा तप करना है। उदाहरण चाहिये तो राम, कृष्ण, दयानन्द, चाणक्य आदि के जीवन चरित पढ़कर उनसे लाभ उठाया जा सकता है। लाभ तभी होगा जब हम जो पढ़ेगे, उसकी समीक्षा व चिन्तन-मनन कर सत्य को प्राप्त होंगे और उसका पूरा पूरा आचरण भी करेंगे। केवल तोता रटन्त से कोई लाभ नहीं होता। ऋषि दयानन्द ने कहा है कि मिश्री मिश्री कहने से मुंह मीठा नहीं होता अपितु मिश्री की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने पर जब वह मिल जाती है, तब उससे यथोचित लाभ व मुंह मीठा होता है, स्वाद का पता चलने के साथ सुखानुभूति होती है। आचरणहीन लोगों का जीवन पशुओं से भी बदतर होता है। अतः संसार के सभी लोगों को अपनी आत्मा के कल्याण के लिए वेदों की शिक्षा सहित ऋषियों की सत्य व अनुभव सिद्ध बातों को भी जानना व उनका आचरण करना चाहिये। आत्मा के लिए वैदिक साहित्य का अध्ययन व योगाभ्यास भी परम लाभकारी होता है। अतः इन सभी कार्यों का मनुष्य को सेवन करना चाहिये। कुछ इस प्रकार की भावना हमें आर्यसमाज के 6ठे नियम निहित प्रतीत होती है।

 मनुष्य की सामाजिक उन्नति सामाजिक नियमों के पालन से होती है। इसके लिए सभी सामाजिक नियमों का वेदानुकूल व ऋषियों की मान्यताओं के अनुकूल होना आवश्यक है। मनुष्य अल्पज्ञ है अतः उसके कामों में अपूर्णता होती है। वह कुछ अनुचित नियम भी बना सकता है। मांसाहार, धूम्रपान, अश्लीलता विषयक नियम आदि सभी नियम मानव समाज के लिए अनुचित हैं व इससे मनुष्य का चरित्र सुधरने के स्थान पर बिगड़ता है परन्तु आज के आधुनिक समाज में कुछ शर्तों के साथ इनको मान्यता प्राप्त है। यह नियम वेद एवं ऋषियों की वेदानुकूल मान्यताओं के सर्वथा विपरीत हैं। अतः शारीरिक, सामाजिक एवं आत्मिक उन्नति के लिए वेदानुकूल नियमों का पालन अनिवार्य है। सामाजिक नियमों की बात करते हैं तो इसके लिए हमें आर्यसमाज के 10 नियमों पर दृष्टि डालनी होगी और उन सबका पालन करना होगा। हमें इसके लिए ईश्वरोपासक बनने के साथ यज्ञादि भी सम्पादित करने होंगे। सत्य व्यवहार करना होगा, परोपकार, सेवा आदि के कार्यों को यथाशक्ति करना होगा। राजनीति सहित सभी सामाजिक कार्यों में रूचि लेनी होगी। राजनीतिज्ञों की वोट बैंक नीति को समझ कर उनका विरोध करना होगा व उन्हें अच्छा सबक सिखाना होगा। उनकी कूट नीतियों से सावधान भी रहना होगा। जिन पुरूषों को राजनीतिक दलों ने अपने स्वार्थों के कारण महान बताया है, उनके जीवन का भी सूक्ष्मता से अध्ययन कर उसमें राष्ट्रहित व राष्ट्र के अहित के कार्यों को जानकर ही उनका मूल्यांकन करना होगा। यह जरूरी नहीं की बड़े नेताओं द्वारा कही गई सभी बाते ठीक हों या समाचार पत्र या मीडिया से जिन बातों का प्रचार किया जाता है वह उचित ही हों। हमें विवेक जाग्रत कर उसके अनुसार स्वयं को ढालना होगा व समाज के भोले-भाले लोगों को भी जागरूक करना वा समझाना होगा। सामाजिक उन्नति पर भी बहुत कुछ कहा जा सकता है परन्तु हमने संकेत मात्र में कुछ बातें कहीं हैं।

 आर्यसमाज के 6ठे नियम में कहा गया है कि संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है। किसी भी समाज, देश व संसार की उन्नति सद्ज्ञान, सद्कर्म, सदाचरण, परोपकार, सेवा सहित ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानकर उसकी उपासना व यज्ञादि कर्मों को करके ही हो सकती है। यह सभी कार्य आर्यसमाज अपनी स्थापना सन् 1875 व उससे भी पूर्व इसके संस्थापक ऋषि दयानन्द अपने विद्या गुरू स्वामी विरजानन्द सरस्वती से दीक्षा लेकर सन् 1863 से करते चले आयें हैं। आवश्यकता यही है कि यह काम जारी रहें व इनको तीव्र गति से चलाया जाये? सरकार और सभी धार्मिक मत व सम्प्रदायों का भी इसमें सहयोग मिले तो यह अति शीघ्र पूरा व लागू हो सकता है। एक मनुष्य व समाज से जितना कार्य हो सकता है उतना ही होगा। जब तक सभी का क्रियात्मक अर्थात् मन, वचन व कर्म से सहयोग नहीं मिलेगा, कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता। आर्यसमाज को इस कार्य को जारी रखने के साथ अपने संगठन की कमजोरियों व त्रुटियों को भी दूर करना चाहिये। स्वार्थीं व अयोग्य लोगों को संगठन से पृथक करना चाहिये। आजकल सर्वत्र अनेक स्वार्थी तत्व संगठन में आ गये हैं जो मुकदमेबाजी, गुटबाजी करके अपने स्वार्थों को सिद्ध कर रहे हैं। ऐसे लोगों से सज्जन आर्यजनों को दूर रहना चाहिये और कार्य को तीव्रगति से करने के लिए सभी को अपनी अपनी लोकैषणा, वित्तैषणा एवं पुत्रैषणा को दूर करना चाहिये। इसी के साथ इस बड़े विषय पर इस संक्षिप्त लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**